IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

मन-मस्तिष्क के रेशे-रेशे में बसी दिनकर जी की रचनाएँ

डॉ० विभा माधवी

अपनी लेखनी से जन-जन में ऊर्जा का संचार करने वाले, सबके मानस में हुंकार भरने वाले, सबों की रगों में ओज और शौर्य भरने वाले "राष्ट्रकवि दिनकर" जी का सम्पूर्ण काव्य मानवतावाद एवं मानवीय चेतना से भरा है। इनका साहित्य व्यापक, विराट और चिंतन परक है। इनकी रचनाओं में भारतीय दर्शन ही नहीं, विश्व संस्कृति एवं दर्शन का भी अद्‌भुत समन्वय है।

रामधारी सिंह 'दिनकर' हिन्दी के एक प्रमुख लेखक, कवि व निबन्धकार हैं। 'दिनकर' जी स्वतन्त्रता से पूर्व एक विद्रोही कवि के रूप में स्थापित हुए और स्वतन्त्रता के बाद 'राष्ट्रकवि' के नाम से जाने गये। वे छायावादोत्तर कवियों की पहली पीढ़ी के कवि थे। इनका जन्म 23 सितंबर 1908 को बिहार जिले के सिमरिया नामक स्थान पर हुआ। इनके पिता रवि सिंह एक साधारण किसान थे एवं माता मनरूप देवी थी। दिनकर जब दो वर्ष के थे, तभी उनके पिता का देहावसान हो गया। परिणामत: दिनकर और उनके भाई-बहनों का पालान-पोषण उनकी विधवा माता ने किया। दिनकर का बचपन और कैशोर्य देहात में बीता। ग्रामीण परिवेश की प्रकृति सुषमा का प्रभाव दिनकर के मन में बस गया, पर शायद इसीलिए वास्तविक जीवन की कठोरताओं का भी अधिक गहरा प्रभाव पड़ा।

दिनकर जी अपनी काव्ययात्रा का शुभारम्भ बारदोली-विजय संदेश (1928) एवं प्रणभंग (1929) से किया है। इन्होंने साठ से भी अधिक पुस्तकों की रचना की है। लगभग दस पुस्तकें स्वतंत्रता से पूर्व लिखी गई हैं और बाकी पुस्तकें स्वतंत्रता पश्चात।

कुरुक्षेत्र, रश्मिरथी, परशुराम की प्रतीक्षा, हुंकार जैसे काव्य संग्रहों में दिनकर की काव्य प्रतिभा का पल्लवन हुआ है।

"कुरुक्षेत्र" और रश्मिरथी में राष्ट्रबोध की भावना अपने नए तेवर के साथ मुखरित हुई है। रश्मिरथी के कर्ण ने दिनकर जी की लोकप्रियता को सर्वाधिक ऊँचाई दी।

दिनकर जी ने युद्ध की समस्या को विश्वव्यापी मानते हुए उसके कारण और निवारण पर प्रकाश डाला है। युद्ध को निंदनीय माना गया है, परंतु अनिवार्य परिस्थितियों में युद्ध की अनिवार्यता भी मानी गई है। कुरुक्षेत्र के माध्यम से युद्ध से पूर्ण रूप से मुक्ति और आवश्यकतानुसार आत्मरक्षा के लिए युद्ध की ललकार दोनों का समन्वयवादी दृष्टियों का विवेचन किया गया है।

आए दिन विश्व युद्ध का खतरा मंडराता रहता है, वर्तमान युग में विज्ञान के आविष्कार से विभिन्न देश की दूरियाँ भले ही घटी हो लेकिन मनुष्य के जीवन में खतरा बढ़ा है। कुरुक्षेत्र के माध्यम से दिनकर जी ने युद्ध का प्रतिकार और मनुष्यता की रक्षा की बात उठायी और यह तभी संभव है, जब हम अपने निजी स्वार्थों से ऊपर उठकर विश्व मानवता के भाव और अपने हृदय के चिंतन को स्वीकार करेंगे। "दिनकर" जी की उर्वशी प्रेम और अध्यात्म का महाकाव्य है। दूसरी ओर कुरुक्षेत्र विश्व-बंधुत्व की भावना लिए हुए है ।दिनकर ने भारत की धार्मिक चेतना को विश्व मानवतावाद से जोड़ते हुए अपने कथन की भाव- भंगिमा को विकसित किया है। भारतीय संस्कृति में मनुष्य के लिए सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह स्थायी मूल्य माने गए हैं। इन्हीं के आधार पर दिनकर ने राष्ट्रीयता बोध की महत्ता को अंगीकार किया है।

"कुरुक्षेत्र" में दिनकर जी ने राष्ट्रबोध के सांस्कृतिक आयामों पर विस्तार से चर्चा की है। हमारे राष्ट्रीय संस्कारों में जीवन मूल्यों के पुनरुत्थान को श्रेयस्कर माना गया है।

दिनकर जी ने "रश्मिरथी" के माध्यम से महाभारत के उपेक्षित पात्र कर्ण के जीवन की विडम्बनाओं को सबों के समक्ष उपस्थित किया है। रश्मिरथी में दिनकर जी ने कर्ण के संवाद के माध्यम से जाति-पाति की दीवार मिटाने की कोशिश की है।

"जाति! हाय री जाति! कर्ण का हृदय क्षोभ से डोला।
कुपित सूर्य की ओर देख वह वीर क्रोध से बोला-
"जाति-जाति रटते, जिनकी पूँजी केवल पाषंड,
मैं क्या जानूँ जाति? जाति हैं ये मेरे भुजदंड।

"मस्तक ऊँचा किये, जाति का नाम लिये चलते हो,
पर, अधर्ममय शोषण के बल से सुख में पलते हो।
अधर्म जातियों से थर-थर काँपते तुम्हारे प्राण,
छल से मांग लिया करते हो अँगूठे का दान।

"पूछो मेरी जाति, शक्ति हो तो, मेरे भुजबल से,
रवि-समाज दीपित ललाट से, और कवच-कुंडल से।
पढ़ो उसे जो झलक रहा है मुझमें तेज-प्रकाश,
मेरे रोम-रोम में अंकित है मेरा इतिहास।

निम्न जाति के लोग उच्च जाति से कहीं आगे न बढ़ जाए इस डर से उनके प्राण काँपते हैं और छल से अंगूठे का दान माँग लिया जाता है। कर्ण कृपाचार्य को इस बात पर ललकारते हुए कहता है।

बड़े वंश से क्या होता है, खोटे हों यदि काम।
नर का गुण उज्ज्वल चरित्र है, नहीं वंश-धन-नाम।

ऊँच-नीच का भेद न माने, वही श्रेष्ठ ज्ञानी है,
दया धर्म जिसमें हो, सबसे वही पूज्य प्राणी है।
क्षत्रिय वही, भरी हो जिसमें निर्भरता की आग।
सबसे श्रेष्ठ वही ब्राह्मण है, हो जिसमें तप-त्याग।।

तेजस्वी सम्मान खोजते नहीं गोत्र बतलाके,
पाते हैं जैसे प्रशस्ति अपना करतब दिखलाके।
हीन मूल की ओर देख जग गलत कहे या ठीक,
वीर खींचकर ही रहते हैं इतिहासों में लीक।

कर्ण अपने कर्म के द्वारा मनुष्य की पहचान करने कहते हैं, न कि जाति और गोत्र के द्वारा। वीरों का एकमात्र गोत्र धनुष होता है। मनुष्य का कर्म ही मनुष्य की पहचान है न कि जाति-गोत्र। दिनकर जी के काव्य में मानवतावाद की झलक मिलती है। मनुष्य का कर्म ही मनुष्य की असली पहचान है।

मूल जानना बड़ा कठिन है नदियों का, वीरों का,

धनुष छोड़कर और गोत्र क्या होता रणधीरों का?

पाते हैं सम्मान तपोबल से भूतल पर शूर,

"जाति-जाति" का शोर मचाते केवल कायर, क्रूर।

वर्षों तक वन में घूम-घूम,

बाधा विघ्नों को चूम चूम,

सह धूप-घाम पानी-पत्थर,

पांडव आये कुछ और निखर।

सौभाग्य न सब दिन सोता है,

देखें, आगे क्या होता है??

दिनकर ने विश्व शांति एवं गृह शान्ति के लिए बहुत बड़ा संदेश दिया है। जब अपनों में टकराहट होती है तो सबों को तकलीफ होती है। जब मानव ही नहीं रहेगा तो विश्व विजय कैसा??

जब बंधु विरोधी होते हैं,

सारे कुल वासी रोते हैं।

"इसलिए, पुत्र! अब भी रुककर,

मन में सोचो, यह महासमर,

किस ओर तुम्हें ले जायेगा?

फल अलभ कौन दे पायेगा?

मानवता ही मिट जायेगी,

फिर विजय सिद्धि क्या लायेगी??

दिनकर जी अखंड एकता के पुरोधा है। वे विश्वयुद्ध के विध्वंसकारी परिणाम को दर्शाते हुए कहते हैं कि युद्ध के बाद तो सिर्फ प्रलयंकारी मंजर ही होता है। दिनकर जी रश्मिरथी के माध्यम से कर्ण की वीरता और शौर्य को दर्शाते हुए विश्व- बंधुत्व की कामना करते हैं और मानवतावाद का संदेश देते हैं।

"रामधारी सिंह दिनकर" एक ओजस्वी राष्ट्रभक्त कवि के रूप में जाने जाते हैं। इनकी कविताओं में छायावादी युग का प्रभाव होने के कारण श्रृंगार के भी प्रमाण मिलते है।

दिनकर जी की "उजली आग" में "आदमी का देवत्व" शीर्षक निबंध में भी उनका मानवतावादी दृष्टिकोण देखने को मिलता है। ब्रह्मा जी के शब्दों में:- "मैंने मनुष्य का देवत्व स्वयं उसी के हृदय में छिपा दिया है।" इससे स्पष्ट है कि दिनकर जी हर व्यक्ति को यह संदेश देते हैं कि देवत्व आपके अंदर विराजमान है इसकी पहचान कीजिये और मानवता के विकास में आगे बढिये।

दिनकर के प्रथम तीन काव्य-संग्रह प्रमुख हैं-'रेणुका' (1935 ई.), 'हुंकार' (1938 ई.) और 'रसवन्ती' (1939 ई.) में इनके आरम्भिक आत्ममंथन के युग की रचनाएँ हैं। इनमें दिनकर का कवि अपने व्यक्तिपरक, सौन्दर्यान्वेषी मन और सामाजिक चेतना से उत्तम बुद्धि के परस्पर संघर्ष का तटस्थ द्रष्टा नहीं, दोनों के बीच से कोई राह निकालने की चेष्टा में संलग्न साधक के रूप में मिलता है।

रेणुका में अतीत के गौरव के प्रति कवि का सहज आदर और आकर्षण परिलक्षित होता है। पर साथ ही वर्तमान परिवेश की नीरसता से त्रस्त मन की वेदना का परिचय भी मिलता है।

हुंकार में कवि अतीत के गौरव-गान की अपेक्षा वर्तमान दैत्य के प्रति आक्रोश प्रदर्शन की ओर अधिक उन्मुख जान पड़ता है।

रसवन्ती में कवि की सौन्दर्यान्वेषी वृत्ति काव्यमयी हो जाती है पर यह अन्धेरे में ध्येय सौन्दर्य का अन्वेषण नहीं, उजाले में ज्ञेय सौन्दर्य का आराधन है।

सामधेनी (1947 ई.) में दिनकर की सामाजिक चेतना स्वदेश और परिचित परिवेश की परिधि से बढ़कर विश्व वेदना का अनुभव करती जान पड़ती है। कवि के स्वर का ओज नये वेग से नये शिखर तक पहुँच जाता है।

दिनकर जी ने "संस्कृति के चार अध्याय" में कहा है:- "परिवर्तन जब धीरे-धीरे आता है तब, सुधार कहलाता है। किंतु वहीं जब तीव्र वेग से पहुंच जाता है, तब उसे क्रांति कहते हैं।"

"आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी" ने दिनकर जी के विषय में कहा था:- "दिनकर जी अहिंदी भाषियों के बीच हिन्दी के सभी कवियों में सबसे ज्यादा लोकप्रिय थे और अपनी मातृभाषा से प्रेम करने वालों के प्रतीक थे।"

"हरिवंशराय बच्चन" ने कहा था:- "दिनकर जी को एक नहीं, बल्कि गद्य, पद्य, भाषा और हिन्दी-सेवा के लिये अलग-अलग चार ज्ञानपीठ पुरस्कार दिये जाने चाहिये।"

रामवृक्ष बेनीपुरी ने कहा:- "दिनकर जी ने देश में क्रान्तिकारी आन्दोलन को स्वर दिया।"

नामवर सिंह ने कहा है:- "दिनकरजी अपने युग के सचमुच सूर्य थे।"

प्रसिद्ध साहित्यकार राजेन्द्र यादव ने कहा:- दिनकर जी की रचनाओं ने उन्हें बहुत प्रेरित किया।

प्रसिद्ध रचनाकार काशीनाथ सिंह के अनुसार 'दिनकरजी राष्ट्रवादी और साम्राज्य-विरोधी कवि थे।'

दिनकर जी की रचनाओं की कुछ पंक्तियाँ जन-मानस के जिह्वा पर चढ़ कर उनकीअपनी हो गयी है और इसके द्वारा उनके मन-मस्तिष्क को झंकृत करते रहती है।

किस भाँति उठूँ इतना ऊपर? मस्तक कैसे छू पाउँ मैं? ग्रीवा तक हाथ न जा सकते, उँगलियाँ न छू सकती ललाट वामन की पूजा किस प्रकार, पहुँचे तुम तक मानव विराट?

कलम आज उनकी जय बोल

कलम देश की बड़ी शक्ति है भाव जगाने वाली,

दिल ही नहीं दिमागों में भी आग लगाने वाली।

रे रोक युधिष्ठर को न यहाँ, जाने दे उनको स्वर्ग धीर

पर फिरा हमें गांडीव गदा, लौटा दे अर्जुन भीम वीर

वैराग्य छोड़ बाँहों की विभा संभालो

चट्टानों की छाती से दूध निकालो

है रुकी जहाँ भी धार शिलाएं तोड़ो

पीयूष चन्द्रमाओं का पकड़ निचोड़ो। वीर से

बचपन से ही दिनकर जी की पंक्तियां मन-मस्तिष्क में ऊर्जा का संचार करने और मन में प्रेरणा देने का कार्य करती रही है।

दिनकर की कविताओं में सत्ता पलट करने की ताकत है- "सिंहासन खाली करो कि जनता आती है।"

दो में से तुम्हें क्या चाहिए, कलम या कि तलवार

मन में ऊंचे भाव कि तन में शक्ति विजय अपार

कलम देश की बड़ी शक्ति है भाव जगानेवाली,

दिल ही नहीं दिमागों में भी आग लगानेवाली।

एक जनवरी 1973 को इन्हें उर्वशी के लिये ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला। उस समय दिनकर जी ने अपने उद्बोधन में कहा:- "भगवान ने मुझको जब इस पृथ्वी पर भेजा तो मेरे हाथ में एक हथौड़ा दिया और कहा कि जा तू इस हथौड़े से चट्टान के पत्थर तोड़ेगा और तेरे तोड़े हुए अनगढ़ पत्थर भी कला के समुद्र में फूल के समान तैरेंगे।....मैं रंदा लेकर काठ को चिकनाने नहीं आया था। मेरे हाथ में तो कुल्हाड़ा था जिससे मैं जड़ता की लकड़ियों को फाड़ रहा था।...." ऐसे विचारों के ध्वजवाहक थे हमारे दिनकर जी।

दिनकर जी लोकसमर्पित कवि हैं, इनके काव्यों में राष्ट्रीयता, देशप्रेम, वर्तमान पतन एवं शोषण के प्रति विद्रोह का उद्बोधन है। ये हमारे राष्ट्र कवि हैं। इनकी कविताओं ने देश की सोयी जनता को जगाने का काम किया। वे मानवता और विश्व बंधुत्व के महान पुजारी थे। वे देश में नई चेतना लाना चाहते थे। इन्होंने अपने प्राचीन भारत का गुणगान कर अपने भविष्य को उज्ज्वल बनाने का प्रयत्न किया। मनुष्य को इतिहास की भूल से सीखने का आह्वान किया और इससे प्रेरणा लेने की सीख दी। इसकी रचनाओं में जनमानस की पीड़ा छलकती है। इन्होंने शोषण मुक्त भारत की कल्पना की थी। ये भारतीय संस्कृति के ध्वजवाहक थे। विश्वकवि दिनकर जी का रचना संसार मानवतावादी दृष्टिकोण से भरा हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ:-

1. संस्कृति के चार अध्याय
2. उर्वशी
3. हिमालय
4. कुरुक्षेत्र
5. रश्मिरथी
6. हुंकार
7. परशुराम की प्रतीक्षा
8. रसवंती
9. रेणुका
10. उजली आग